National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2016; 1(5): 29-31
© 2016 NJHSR
www.sanskritarticle.com

टीकमचन्द मीना
(शोध छात्र) हिन्दी विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी

Correspondence:
टीकमचन्द मीना
(शोध छात्र) हिन्दी विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी

नामवर सिंह-दूसरी परम्परा के अन्वेषक

टीकमचन्द मीना

यदि प्रगतिशील आलोचना को जातीय और हिन्दी पाठकों की दृष्टि में विश्वसनीय बनाने का कार्य डॉ. रामविलास शर्मा ने किया है तो उसे सक्रिय आन्दोलन के रूप में जीवित रखने का कार्य डॉ. नामवर सिंह ने किया है। नयी कविता को सहानुभूति से देखने की जो मांग मुक्तिबोध कर रहे थे, प्रगतिवादी आलोचक नामवर सिंह ने उनकी मांगों को स्वीकार किया। वे समाजवादी (भावबोध) जीवन दृष्टि और नयी कविता की भाव-भूमि के समवेत बोध को लेकर आलोचना से प्रवृत्त हुए। इनकी विशिष्टता यह है कि इन्होंने प्राचीन साहित्य के साथ ही साथ नये से नये हिन्दी कवियों एवं लेखकों की अपनी आलोचना का विषय बनाया। हिन्दी में पृथ्वीराजरासो से लेकर मुक्तिबोध, धूमिल और विवेक 'निराला' तक की लम्बी काव्य परम्परा एवं प्रेमचन्द से निर्मल वर्मा और अखिलेश तक के कथा साहित्य की परम्परा को आत्मसात् करना डॉ नामवर सिंह के ही वश का काम है। नामवर सिंह प्रतिमान स्थापित करके कृति का मूल्यांकन नहीं करते बल्कि कृति में घुसकर प्रतिमान को ढूँढते है। डॉ नामवर सिंह ने अपना आलोचक जीवन **"हिन्दी के विकास में अपभ्रंश के योग"** से शुरू किया था। पं॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी के साथ संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो का संपादन किया। इन दोनों ही ग्रन्थों के माध्यम से उनके आलोचनात्मक क्षमता का संकेत मिलने लगता है। वे सिद्धो (खारिज) रचनाओं में जीवन के प्रति बहुत बड़ा स्वीकारात्मक दृष्टिकोण देखते है। नामवर जी वीरगाथात्मक रचनाओं को अन्तः प्रवृत्तियों की दृष्टि से दरबारी सिद्ध करते है। इन दो पुस्तकों में डॉ नामवर सिंह आलोचना के रूप की अपेक्षा शोधकर्त्ता एवं इतिहासकार के रूप में हमारे सामने आते है। ये पुस्तके आलोचनात्मक नहीं है फिर भी हिन्दी साहित्य को एक नई दृष्टि माक्र्सवादी दृष्टि से समझने की कोशिश यहाँ से प्रारम्भ होती है। इतिहास सम्बन्धी अपना दृष्टिकोण डॉ. नामवर सिंह ने लिखते हुए और स्पष्ट रूप से **"इतिहास का नया दृष्टिकोण"** में व्यक्त किया है। इसमें हिन्दी साहित्य के पुर्नलेखन की मांग की नई है। द्वान्द्वात्मक पद्धति (माक्र्सवादी) से युक्त ऐतिहासिक भौतिकवादी दृष्टिकोण को ही इतिहास का नया दृष्टिकोण कहा गया है।

डॉ.नामवर सिंह की **'छायावाद'** नामक पुस्तक में इसी दृष्टिकोण से हिन्दी की एक काव्यधारा का विश्लेषण माना गया है। यह वह समय था जब छायावाद क्रमशः समर्थन और विरोधो के दौर से गुजर चुका था। अन्य आलोचकों से यह आलोचना इस बात में भिन्न है जहाँ औरों ने छायावाद की ऐतिहासिक-सामाजिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट किया। वहाँ नामवर सिंह ने छायावादी कविता के छाया चित्रों में निहित सामाजिक सत्य का उद्घाटन किया।

यह निश्चय ही माक्र्सवादी आलोचना का अधिक परिष्कृत रूप था। इसके अध्याय के शीर्षकों से ही स्पष्ट है कि विवेचना में छायावादी काव्य वस्तु के सैद्धांत्तिक निष्कर्ष तक पहुँचा गया है, सिद्धांतों को यात्रिक ढंग से छायावाद पर थोपा नहीं गया है। वे रहस्यवाद, स्वछन्दतावाद, छायावाद तीनों को एक ही काव्यधारा की प्रवृत्तियाँ मानते हैं। नामवर सिंह छायावादी कविता का आरम्भ व्यक्तिवाद से मानते हैं। वे कहते है कि छायावादी कविता का स्वर आत्मीय है। वे कहते है सामंती बंधन के कड़ाई कमे कारण पुराने कवि अपने प्रणय सम्बन्धों को सीधे ढंग से व्यक्त नहीं कर पाते थे, जबकि छायावादी कवि इस बंधन का अतिक्रमण करते है। वे कहते है कि छायावाद का व्यक्तिवाद वैज्ञानिकता के सहारे सामंती संकीर्णताओं को तोड़ते हुए हिन्दी साहित्य में आता है। नामवर सिंह की छायावाद के सम्बन्ध में कुछ और मान्यताएँ-

1. छायावादी कवि प्रकृति की ओर दौड़ना व्यक्तिगत स्वच्छता तथा स्वाधीनता का परिणाम था।
2. छायावादी कवि ने जिस प्रकार प्रकृति को मुक्त किया उसी प्रकार नारी को भी। रीतिकालीन कविता में नारी नायिका के रूप में थी। छायावाद में माँ, सहचरी, देवी, प्राण, आदि रूपों में आती है।
3. पुर्नजागरण ने हमारे साहित्य पर जो प्रभाव डाला था, छायावाद उसका विकास था।

छायावाद का पर्यावसान प्रगतिवाद में होना था बिल्कुल उसी तरह जैसे व्यक्तिवाद का समाजवाद में होना है।

काव्य समीक्षा की उनकी दूसरी पुस्तक ''**कविता के नये प्रतिमान**'' है जो अलोचक के एक दौर की वैचारिक निष्पति कही जा सकती है। नामवर जी ने अपनी समीक्षा में जिस संवाद की भाव-भूमि को लगातार विकसित किया वो सारी प्रवृत्तियों 'नये प्रतिमान' में लक्षित होती है। नामवर सिहं जी को शिकायत उन तमाम प्रतिमानों से है जो 'व्यक्तिक और आत्मपरक छायावादी संस्कारों से गढ़े गये है।'' इसलिए उन्होंने आत्मपरक कविता के सीमित दायरे से बाहर निकलकर काव्य के प्रतिमान निर्मित करने की उस आवश्यकता को पूरा करने का प्रयास किया जिसकी कमी मुक्तिबोध भी महसूस कर रहे थे। वे कहते है कि ''कविता के प्रतिमान को व्यापकता प्रदान करने की दृष्टि से आत्मपरक नयी कविता की दुनिया से बाहर निकलकर उन कविताओं को भी विचार की सीमा में ले जाना आवश्यक है, जिन्हें किसी अन्य उपयुक्त शब्द के अभाव में सामान्यतः 'लम्बी कविता' कहा जाता है।'' मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में' की व्यवहारिक समीक्षा प्रस्तुत करते हुए कविता के प्रतिमानों को स्पष्ट करते है।

समीक्षा के क्षेत्र में प्रायः उपेक्षित कथा समीक्षा को भी अपनी पुस्तक '**कहानी-नयी कहानी**' की रचना से नामवर सिंह ने काव्य समीक्षा के स्तर तक उठाया। कहानी के अंदर से नयी कहानी के प्रतिमान खोजते हुए नामवर सिंह नयी कहानी की विशद् व्याख्या की। यह कथा समीक्षा किसी सुनिर्दिष्ट परम्परा के अभाव में सूक्ष्म विश्लेषण के माध्यम से समसामयिक कथा-साहित्य की यह समीक्षा महत्वपूर्ण कही जायेगी। यह कथन कितना महत्वपूर्ण है। ''हिन्दी कविता की अपेक्षा कहानी में स्वस्थ सामाजिक शक्ति कहीं अधिक है और आज उपन्यास की तरह कहानी सामाजिक परिवर्तन के लिए जोरदार साहित्यिक शस्त्र की तरह काम करती हैं।''

लम्बे अंतराल के बाद उनकी पुस्तक "**दूसरी परम्परा की खोज**'' आती है। जिस प्रकार ''निराला की साहित्य साधना' में रामविलास शर्मा ने निराला के जीवन संघर्ष के हवाले से छायावादी काव्यान्दोलन के इतिहास की पुर्नरचना की थी। उसी तर्ज पर 'दूसरी परम्परा की खोज' में नामवर सिंह ने हजारी प्रसाद द्विवेदी के जीवन के घटनात्मक ब्यौरा का विस्तार करने के बजाय उन्हीं अंशों की चर्चा की है जो उनकी रचनात्मक दृष्टि की समझ में सहायक हो सकते थे। दूसरी परम्परा की खोज'' का महत्व इस बात में है कि उसमें कुछ ऐसी अवधारणाओं के परम्परागत मूल्य का प्रश्न उठाया गया है जिन्हें बड़ी सुविधा से पश्चिम की देन स्वीकार करके उनके पारम्परिक मूल विशेष आग्रहों के तहत खोज कर निश्चिय कर दिए गए।

उनकी पुस्तक **"वाद-विवाद संवाद"** के तमाम लेख किसी न किसी विशिष्ट संदर्भ से सम्बद्ध है। इसी पुस्तक में वे कहते हैं " अपने सर्जनात्मक स्वरूप में आलोचना कर्म मूलतः व्यक्तिगत ही प्रयास है।" आलोचना ही अलोचना का मूल धर्म है। वे कहते है कि आलोचना औजारों का बक्सा नहीं है जिसे पाकर कोई आलोचक ही बन जाये। अक्ल हो तो एक पेचकस ही काफी है। वस्तुतः इस पुस्तक में संकलित सभी निबन्धों में प्रगतिशील चिन्तन को वर्तमान संदर्भ में आगे बढ़ाया गया है और माक्र्सवादी समीक्षा पर जो अनेक कोणों से प्रत्यक्ष-प्रच्छन्न प्रहार हो रहे हैं। उनका सतर्क सआधार जवाब दिया गया है।

नामवर सिंह सिद्धांत शास्त्री न होकर प्रबुद्ध और रसिक समीक्षक है। रूप पर बल देते है लेकिन रूपवादी नही हैं। वे कहते है कि आलोचना का काम प्रतिमानों को सूत्रबल करना नहीं' वह दार्शनिको का काम हैं। नामवर जी स्वयं कहते कि वे लिक्खाड़ नहीं है। किसी समस्या को लेकर लिखने की बौद्धिक विवशता या दबाव जब तक नहीं होता तब तक वे नहीं लिखते। वे वाक् आलोचक के रूप में ही विख्यात है। समसमायिक रचनाओं पर विभिन्न निबन्धों के माध्यम से आलोचना के कार्य में रत् है। व्याख्यानों के माध्यम से अपनी आलोचना को संदर्भवान बना रहे है। वे शुद्ध साहित्यिक आलोचक है।

पीडित्व और सहृदयता, शोध और आलोचना, शास्त्र और लोक भारतीय तथा विदेशी-विचार-पद्धतियों, पूर्वी साम्यवादी तथा पश्चिमी स्वाधीन समीक्षा-धाराओं, पुराने तथा नये साहित्य में बराबर रूचियों का विरल सम्मिलन उनके, आलोचक व्यक्तिगत की असाधारण विशेषता है। इस प्रकार नामवर सिंह समसामयिक रचना जगत के संदर्भवान् आलोचक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग।
2. संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो का सम्पादन।
3. इतिहास का नया दृष्टिकोण।
4. छायावाद।
5. कविता के नये प्रतिमान।
6. कहानी नयी कहानी।
7. दूसरी परम्परा की खोज।
8. वाद-विवाद-संवाद।